

॥ श्री तुलसी चालीसा ॥
□ Shri Tulsi Chalisa □

॥ दोहा ॥

जय जय तुलसी भगवती सत्यवती सुखदानी ।
नमो नमो हरि प्रेयसी श्री वृन्दा गुन खानी ॥
श्री हरि शीश बिरजिनी, देहु अमर वर अम्ब ।
जनहित हे वृन्दावनी अब न करहु विलम्ब ॥

॥ चौपाई ॥

धन्य धन्य श्री तुलसी माता । महिमा अगम सदा श्रुति गाता ॥
हरि के प्राणहु से तुम प्यारी । हरीहीं हेतु कीन्हो तप भारी ॥

जब प्रसन्न है दर्शन दीन्ह्यो । तब कर जोरी विनय उस कीन्ह्यो ॥
हे भगवन्त कन्त मम होहू । दीन जानी जनि छाडाहू छोहू ॥

सुनी लक्ष्मी तुलसी की बानी । दीन्हो श्राप कध पर आनी ॥
उस अयोग्य वर मांगन हारी । होहू विटप तुम जड़ तनु धारी ॥

सुनी तुलसी हीं श्रप्यो तेहिं ठामा । करहु वास तुहू नीचन धामा ॥
दियो वचन हरि तब तत्काला । सुनहु सुमुखी जनि होहू बिहाला ॥

समय पाई क्हाँ रौ पाती तोरा । पुजिहौ आस वचन सत मोरा ॥
तब गोकुल मह गोप सुदामा । तासु भई तुलसी तू बामा ॥

कृष्ण रास लीला के माही । राधे शक्यो प्रेम लखी नाही ॥
दियो श्राप तुलसिह तत्काला । नर लोकही तुम जन्महु बाला ॥

यो गोप वह दानव राजा । शङ्ख चुड नामक शिर ताजा ॥
तुलसी भई तासु की नारी । परम सती गुण रूप अगारी ॥

अस द्वै कल्प बीत जब गयऊ । कल्प तृतीय जन्म तब भयऊ ॥

वृन्दा नाम भयो तुलसी को । असुर जलन्धर नाम पति को ॥

करि अति द्वन्द अतुल बलधामा । लीन्हा शंकर से संग्राम ॥
जब निज सैन्य सहित शिव हारे । मरही न तब हर हरिही पुकारे ॥

पतिव्रता वृन्दा थी नारी । कोऊ न सके पतिहि संहारी ॥
तब जलन्धर ही भेष बनाई । वृन्दा ढिग हरि पहुच्यो जाई ॥

शिव हित लही करि कपट प्रसंगा । कियो सतीत्व धर्म तोही भंगा ॥
भयो जलन्धर कर संहारा । सुनी उर शोक उपारा ॥

तिही क्षण दियो कपट हरि टारी । लखी वृन्दा दुःख गिरा उचारी ॥
जलन्धर जस हत्यो अभीता । सोई रावन तस हरिही सीता ॥

अस प्रस्तर सम हृदय तुम्हारा । धर्म खण्डी मम पतिहि संहारा ॥
यही कारण लही श्राप हमारा । होवे तनु पाषाण तुम्हारा ॥

सुनी हरि तुरतहि वचन उचारे । दियो श्राप बिना विचारे ॥
लख्यो न निज करतूती पति को । छलन चह्यो जब पारवती को ॥

जड़मति तुहु अस हो जड़रूपा । जग मह तुलसी विटप अनूपा ॥
धग्व रूप हम शालिग्रामा । नदी गण्डकी बीच ललामा ॥

जो तुलसी दल हमही चढ़ इहैं । सब सुख भोगी परम पद पईहैं ॥
बिनु तुलसी हरि जलत शरीरा । अतिशय उठत शीश उर पीरा ॥

जो तुलसी दल हरि शिर धारत । सो सहस्त्र घट अमृत डारत ॥
तुलसी हरि मन रञ्जनी हारी । रोग दोष दुःख भंजनी हारी ॥

प्रेम सहित हरि भजन निरन्तर । तुलसी राधा में नाही अन्तर ॥
व्यन्जन हो छप्पनहु प्रकारा । बिनु तुलसी दल न हरीहि प्यारा ॥

सकल तीर्थ तुलसी तरु छाही । लहत मुक्ति जन संशय नाही ॥
कवि सुन्दर इक हरि गुण गावत । तुलसिहि निकट सहसगुण पावत ॥

बसत निकट दुर्बासा धामा । जो प्रयास ते पूर्व ललामा ॥
पाठ करहि जो नित नर नारी । होही सुख भाषहि त्रिपुरारी ॥

॥ दोहा ॥

तुलसी चालीसा पढ़ही तुलसी तरु ग्रह धारी ।
दीपदान करि पुत्र फल पावही बन्ध्यहु नारी ॥
सकल दुःख दरिद्र हरि हार ह्वै परम प्रसन्न ।
आशिय धन जन लड़हि ग्रह बसही पूर्णा अत्र ॥

लाही अभिमत फल जगत मह लाही पूर्ण सब काम ।
जेई दल अर्पही तुलसी तंह सहस बसही हरीराम ॥
तुलसी महिमा नाम लख तुलसी सूत सुखराम ।
मानस चालीस रच्यो जग महं तुलसीदास ॥

॥ इति तुलसी चालीसा सम्पूर्णम् ॥